चन्दामामा
माँ-बच्चों का मासिक पत्र
1st MAR. '51

Chandamama, March '57

Photo by Pranlal K. Patel

सोल एजण्ट:

सौथ इन्डिया कार्पोरेशन (मद्रास) लिमिटेड

८० कम्बुदास गली, मद्रास-१. (दक्षिण भारत)

डोंगरे का बालामृत

गोदी का बच्चा

चन्दामामा

माँ-बच्चों का मासिक पत्र

संपादक : चक्रपाणी

वृन्दावन के लोग एक बार
इन्द्र का यज्ञ करने की तैयारी करने लगे। यह
देख कर कन्हैया ने नन्द से पूछा—'पिताजी! ये सब
तैयारियाँ किसलिए?' 'बेटा! हम इन्द्र की पूजा करने जा रहे
हैं। इन्द्र वर्षा का देवता है। उसी की कृपा से पानी बरसता है और
हर तरह की फ़सलें होती हैं।' नन्द ने जवाब दिया। यह सुन कर कन्हैया
ने कहा—'पिताजी! हमारे सच्चे देवी-देवता तो ये गौएँ और यह गोवर्धन
पहाड़ हैं। इसलिए हमें इनकी पूजा करनी चाहिए। हम इन्द्र की कृपा की भीख
क्यों माँगने जाएँ?' तब वृन्दावन के लोगों ने इन्द्र का यज्ञ बन्द कर दिया। यह
देख कर इन्द्र को बहुत क्रोध आया। उसने ग्वालों से बदला लेने की ठानी। बस,
उसकी आज्ञा से पल भर में आसमान बादलों से घिर गया। बिजली चमकने
लगी। भयङ्कर गड़गड़ाहट के साथ ओलों की बारिश शुरू हुई। तब कन्हैया
ने उस विशाल गोवर्धन पहाड़ को अपनी कनीठा पर उठा लिया और एक
छाते की तरह पकड़े रखा। ग्वाले सभी अपनी गायों के साथ उसके
नीचे आ गए। इन्द्र ने सात दिन तक भी पानी बरसाया। लेकिन
वह वृन्दावन के लोगों का बाल भी बाँका न कर सका। तब
उसने आकर कृष्ण के पैरों पड़कर माफ़ी माँग ली।
इन्द्र का गर्व भङ्ग हो गया।

वर्ष 2—अङ्क 7 एक प्रति 0-6-0

मार्च — 1951 वार्षिक 4-8-0

मक्खीचूस

किसी गाँव में रहता बच्चो !
एक बड़ा ही मक्खी-चूस ।
वह था बहुत धनी, पर था वह
पहले नम्बर का कंजूस ।

उसके बीवी - बच्चे कोई
न थे; किंतु वह मूरखराम—
मुँह बिगाड़ लेता था, ज्यों ही
सुनता दान-धरम का नाम ।

उसने अपना सारा रुपया
अशर्फियों में बदल लिया ।
एक जगह इक गड्ढा खोद कर
उनको उस में छिपा दिया ।

रोज़ रोज़ वह चुपके चुपके
पास गड्ढे के चल देता ।
अशर्फियाँ बाहर निकाल कर
गिनता और छिपा देता ।

एक रोज बस, एक चोर ने
जान लिया उसका यह राज़ ।
उसने सोचा—'अच्छा मौका
यह तो मुझे मिला है आज ।'

'बैरागी'

उसी रात आया वह चुपके,
अशर्फियों को खोद निकाल,
बस, चम्पत हो गया वहाँ से
उनको निज झोली में डाल।

जब कंजूस दूसरे दिन उस
स्थल पर पहुँचा, क्या देखा ?
धाड़ मार कर लगा कलपने—
'अरे बाप ! कैसा धोखा ?'

लोग जमा हो गए; उन्होंने
पूछा—'क्यों रोते हो जी ?'
उसने कहा—'लुट गया मैं, सब
रुपया गया, कहूँ क्या जी ?'

बोले वे—'धन भाई ! तुम्हारी
कौन भलाई करता था ?'
बोला वह कंजूस—'देख उस
को मेरा मन भरता था !'

'तब तुम आकर धन के बदले
देखा करना रोज गढ़ा !'
कहा किसी ने, सभी हँस दिए
मन ही मन कंजूस कुढ़ा !

बढ़ते जाना !

['अशोक' बी० ए०]

ठोकर खाना, बढ़ते जाना !
प्यारे पीछे पग न हटाना !
साहस भर लेना प्राणों में
फिर आगे ही बढ़ते जाना !

तूफ़ान उठें, आँधी आये,
पर न ज़रा मन में घबराना।
गिर जाओ, फिर भी उठ बैठो,
रुकना मत, चलते ही जाना !

ठोकर खाना, बढ़ते जाना,
प्यारे ! पीछे पग न हटाना !

छाया रहे भले अँधियारा,
दिखे न तुमको कहीं किनारा,
सोच, अन्धेरा आगे होगा,
हो निराश वापस मत आना !

ठोकर खाना, बढ़ते जाना !
प्यारे ! पीछे पग न हटाना !

आपत्ती लाखों बाधाएं !
सिर पर दुख के घन घिर आएं,
बिजली चमके, बादल गरजें
हँसते - हँसते लड़ते जाना !

ठोकर खाना, बढ़ते जाना
प्यारे ! पीछे पग न हटाना !

ठोकर सह सह कर दीवाने !
ठोकर खा, धुन के मस्ताने !
विजयी बनते एक रोज हैं
होता उनका अमर ठिकाना !

ठोकर खाना ! बढ़ते जाना !
प्यारे ! पीछे पग न हटाना !

जीवन के पथ पर लाखों जन
बस, निसि-दिन चलते ही रहते।
पर मंजिल पर वही पहुँचते
जो धीरज धर सङ्कट सहते।

ठोकर खाना ! बढ़ते जाना !
प्यारे ! पीछे पग न हटाना !
फिर तेरे पीछे चल देगा
धीरे धीरे यही जमाना।

सैकड़ों साल पहले की बात है। किसी नगर में एक राजा था। एक दिन वह भरे दरबार में अपने मन्त्रियों और सर्दारों के साथ बैठा हुआ था। एक चोबदार ने आकर उससे कहा—'महाराज! महाबल नाम का एक आदमी श्रीमान के दर्शन करना चाहता है! उसे अन्दर आने दूँ?'

राजा ने मंजूरी दे दी। चोबदार 'जैसी आज्ञा!' कह कर चला गया।

दरबारियों की नजर दरवाजे की ओर घूम गई। महाबल का नाम सुन कर लोगों के मन में हुआ कि कोई लम्बा-तगड़ा, लोहे-से पुट्ठों वाला पहलवान चौड़ी छाती, कड़ी मूँछें और हाथी की सूँड़-से हाथ-पाँव लिए अकड़ता हुआ अन्दर आने वाला है। लेकिन जब उन्होंने देखा कि एक दुबला-पतला, काँटे की तरह सूखा हुआ आदमी झुकी हुई कमर और पिचका हुआ चेहरा लिए, चोबदार के पीछे-पीछे काँपता हुआ आ रहा है तब उनके आश्चर्य का ठिकाना न रहा। सामने आकर उसने राजा को हाथ जोड़ कर प्रणाम किया और 'जयी भव! दिग्विजयी भव!' कह कर आशीर्वाद देने लगा।

उसे देख कर राजा को बड़ी घृणा हुई और उसने सोचा—'नाम बड़े और दर्शन थोड़े।' उसने क्षोभ से पूछा—'क्यों जी! तुम तो हवा के झोंके से गिर जाने वाले हो! तुमने अपना नाम 'महाबल' क्यों रखा?'

'महाराज! यह मेरा अपना रखा हुआ नहीं है। मेरे चेले-चाटी मुझे इसी नाम से पुकारते हैं।' उस आदमी ने जवाब दिया।

'क्या कहते हो! तुम्हारे चेले-चाटी भी हैं? क्या वे भी तुम्हारे जैसे ही बलवान हैं?' राजा ने व्यंग्य से पूछा।

'महाराज! मालूम होता है कि श्रीमान को मेरे बारे में कोई जानकारी नहीं है। सो

सोहन

बकासुर, हिडिम्बासुर, दुर्योधन और उसके जानी दुश्मन भीम, इन सबको मुझसे शिक्षा पाने का सौभाग्य कैसे प्राप्त होता!' उसने कहा।

'ये सब तो मिट्टी में मिल गए। एक तुम्हीं अब तक कैसे जीते रहे?' राजा ने कुतूहल से पूछा।

'इसमें क्या आश्चर्य है! महाराज! मैं भी हनुमान और जाम्बवान की तरह चिरंजीवी हूँ। लेकिन आजकल तो पेट भर खाना ही नहीं मिलता। इसीलिए सूख कर काँटा हो गया हूँ। ऐसा हो गया हूँ कि लोग अब मुझे पहचान भी नहीं पाते हैं। इस तरह की जिन्दगी से क्या फायदा!' महाबल ने जवाब दिया।

'अच्छा! तुम मेरे पास क्यों आए हो?' राजा ने पूछा।

'आप मुझे अपना दरबारी बना लीजिए। पेट भर खाना दीजिए। जब मैं कुछ दिन बाद पहले की तरह बलवान हो जाऊँगा तो आप जो काम दीजिएगा पूरा करूँगा। फिर कहिएगा तो पहाड़ भी ढोने लगूँगा।' उसने कहा।

सुनिए, श्रीमान! राक्षसों का राजा रावण, जिसने दोनों हाथों से कैलास पहाड़ उठा लिया था, मेरा एक चेला था। वानर-राज वाली जिसने उस रावण को अपनी काँख में दबा कर सात सागर का जल पिलाया था, वह भी मेरा चेला था। इन दोनों के अलावा वाली का भाई सुग्रीव, उसका मन्त्री हनुमान, उसका गुरु जाम्बवान सभी मेरे चेले थे।' उस आदमी ने कहा।

'तो तुम त्रेता-युग के आदमी हो!' राजा ने पूछा।

'त्रेता ही नहीं; मैंने द्वापर भी देखा है, राजन्! नहीं तो विश्व-जयी जरासन्ध, कीचक,

राजा ने सोचा—'देखें, इसकी बातें कहाँ तक सची हैं!' इसके अलावा उस शहर की बगल में ही एक पहाड़ था, जिसके कारण शहर वालों को आने-जाने में बड़ी मुश्किल होती थी। राजा ने सोचा कि इस विचित्र पहलवान को कुछ दिन तक भर-पेट भोजन देकर हृष्ट-पुष्ट बनाने के बाद इस से वह पहाड़ ढोकर कहीं फेंक आने को कह देंगे। इस तरह शहर वालों को बड़ी सुविधा होगी। यह सोच कर उसने मन्त्री से कहा—'इस को रोज मन-चाही चीजें खिलाने का इन्तजाम कीजिए।' मन्त्री ने कुछ अर्ज करना चाहा। लेकिन राजाने उसकी कुछ न सुनी और दरबार बर्खास्त कर दिया।

मन्त्री राजा को सावधान करना चाहता था कि 'हुजूर! यह कोई धोखे की बात है। नहीं तो यह हनुमान और जाँबवान का गुरु कैसे बन सकता है!' लेकिन राजा ने उसको कुछ कहने का मौका ही नहीं दिया। लाचार होकर मन्त्री ने उस आदमी को रोज छप्पन व्यञ्जनों और तरह तरह के पकवानों के साथ खिलाने का इन्तजाम कर दिया।

कुछ ही दिन में दुबला-पतला महाबल मोटा-ताजा बन गया और शान से गर्दन उठा कर, तन कर चलने लगा। आखिर राजा ने एक दिन उसे दरबार में बुलवाया और पूछा—'क्यों जी! अब तुम पहाड़ ढो सकते हो?' 'हुजूर! एक क्या, आज्ञा दें तो पचासों पहाड़ उठा ले आऊँ!' महाबल ने छाती फुला कर कहा। उस का हिम्मत देख कर मन्त्री को भी अचरज हुआ। तब राजा ने अपने पुरोहित को बुला कर पहाड़ ढोने के लिए एक मुहूर्त ठहरवाया। धीरे धीरे दूर दूर तक यह खबर फैल गई कि फलाना रोज महाबल नाम का कोई वीर पहाड़ उठा लाने जा रहा है। बस, तमाशा देखने के लिए हजारों लोग उस दिन उस पहाड़ के पास जमा हो गए।

ठीक समय पर महाबल उस पहाड़ के नजदीक जाकर खड़ा हो गया। राजा भी अपने सभी दरबारियों के साथ नजदीक ही खड़ा था। 'हुजूर! मैं इस पहाड़ को उखाड़ कर कहाँ फेंक दूँ?' महाबल ने राजा से पूछा। 'यहाँ से पचास मील की दूरी पर समुन्दर है। तुम इस पहाड़ को ले जाकर समुन्दर में फेंक दो!' राजा ने कहा। 'बहुत अच्छा!' कह कर महाबल ने गमछा सर पर लपेट लिया और पहाड़ के पास घुटनों के बल बैठ गया। फिर उसने तमाशा देखने के लिए आए हुए हज़ारों आदमियों की ओर फिर कर कहा—'भाइयो! आप लोग कृपा करके इस पहाड़ को उठा कर मेरे सर पर रख दें तो मैं इसे उठा कर समुन्दर में फेंक आऊँ।' उसकी बात सुन कर सब लोग एक दूसरे का मुँह ताकने लगे। 'महाराज खड़े देख रहे हैं। आप लोग देर न कीजिए! जल्दी आकर हाथ बँटाइए!' महाबल ने फिर उनकी तरफ देख कर कहा। 'पहाड़ उठाने में कौन हाथ बँटा सकता है! हम उसे उठा कर तुम्हारे सिर पर नहीं रख सकते।' आखिर लोगों ने उससे कहा। 'तो क्या आप लोग हजारों आदमी मिल कर इतना भी नहीं कर सकते! तो क्या आप सब लोग मुझ अकेले से इसे उठवा कर तमाशा देखने आए हैं! जाइए! जाइए सब अपने अपने घर! मैं उतना बुद्धू नहीं हूँ।' महाबल ने लोगों से कहा।

राजा ने सोचा कि उसका कहना ठीक है। 'जब सब लोग मिल कर इतना भी नहीं कर सकते तो वह बेचारा अकेला क्या कर सकेगा!' यह सोच कर राजा लौट गए। लोग भी महाबल की चालाकी पर मन ही मन हँसते हुए अपने अपने घर चले गए।

बाप और बेटा

'अब आप मुझसे सम्हल कर बातें कीजिए। अब तक आपने मुझको एक बुद्धू समझ रखा था। लेकिन अब आपको कम से कम मेरी सूरत-शक्ल की खातिर करनी होगी। नहीं तो कहे देता हूँ, सारा खेल बिगड़ जाएगा! अब पीटना मेरे हिस्से में है और मार खाना आपके हिस्से में। अगर अब भी आप मुझसे एक लड़के की तरह पेश आइएगा तो घर के नौकर-चाकर मेरी इज्जत क्या करेंगे; सामने ही मेरी हँसी उड़ाने लगेंगे। मैं यह बर्दाश्त नहीं करूँगा। जहाँ तक हो सके, घर का सारा काम-काज मैं ही देखूँगा। आपने अब तक कभी एक फूटी कौड़ी भी मुझे नहीं दी। अब आपको उसका मजा मालूम हो जाएगा। कल से आप मेरे बदले स्कूल जाकर पढ़ा कीजिए। देख लीजिएगा कि मेरे मास्टर कैसे हैं!' नारायण ने कहा।

ये बातें सुन कर राजाराम क्रोध से जल उठा। 'तो क्या तुम चाहते हो कि मैं इस उम्र में जाकर दूसरी श्रेणी में पढ़ा करूँ!' उसने कहा।

'आप तो पहले ही से पढ़े-लिखे हैं। इसलिए आपको ज्यादा दिक्कत न होगी!' नारायण ने कहा।

'मैं स्कूल हरगिज नहीं जाऊँगा।' राजाराम ने साफ-साफ कह दिया।

'नहीं जाइएगा तो मास्टर खुद आएगा और मारते-पीटते घसीट ले जाएगा।' नारायण ने कहा।

'तो तुम मुझे पिटवाओगे!' बाप ने गुस्से से पूछा।

'क्या आपने मुझे नहीं पिटवाया था!' बेटे ने कहा।

तब राजाराम ने थोड़ी देर सोच-विचार कर पूछा—'तो क्या मास्टर खूब पीटता है!'

'कहना ही क्या! सबक पढ़ने पर भी पीटेगा। नहीं पढ़ने पर भी पीटेगा। लड़कों की भलाई के लिए पीटेगा। अपने हाथ की खुजली मिटाने के लिए पीटेगा। जब उसे

और कुछ नहीं सूझेगा तो लड़कों को पीटने लगेगा। उसका मत है—'दण्डम् दश गुणम् भवेत्।' नारायण ने कहा।

'अगर मास्टर मुझे पीटने लगे तो?' राजाराम ने उदास होकर पूछा।

'जब उसने मुझे पीटा था तब?' नारायण ने पूछा—'क्या आपने उससे नहीं कह रखा था कि पीटने में कभी आगा-पीछा न कीजिएगा?'

राजाराम को यह देख कर बड़ा गुस्सा आया कि नारायण अब मौका देख कर इस तरह उससे बदला चुकाना चाहता है! लेकिन बेचारा करता क्या! 'क्या तुम समझते हो कि मैं तुम्हारी चालबाजी देखते चुपचाप बैठा रहूँगा! मैं अभी जाकर सब से कह दूँगा कि तुम राजाराम नहीं हो! यह न समझ लेना कि तुम आसानी से बच जाओगे!' राजाराम ने क्रोध से कहा।

नारायण ठठा कर हँसने लगा। अब उसे डर नहीं लग रहा था। 'ठीक है! नौकरों को बुलाइए! उनसे सच-सच बता दीजिए! देखें, वे मेरी बातों पर विश्वास करते हैं या आपकी बातों पर! अभी देख लीजिएगा!' यह कह कर नारायण ने महाराजिन को बुलाया। वह दौड़ी-दौड़ी आई।

'देख, मैं ही राजाराम हूँ। यह नारायण है। हम दोनों की सूरत-शकल में हेर-फेर हो गया है।' राजाराम ने उससे कहा।

'मैया री मैया! तनिक सा लड़का बातें कैसी करता है!' महाराजिन ने होंठ पर उँगली रखी और नारायण की ओर गौर से देखते हुए कहा।

'भूख के मारे आज नारायण का दिमाग घास चरने गया है। अन्दर ले जाकर इसे पेट भर कचौड़ियाँ खिला दो!' नारायण ने महाराजिन से हँसते हुए कहा।

'बदमाश की ऐसी बातें सुन कर उसे दो तमाचे लगाना चाहिए—उलटे उसे कचौड़ियाँ खिलाने का आदेश दिया जा रहा है! आपने ही उसको सर चढ़ा लिया है!' यह कह कर महाराजिन ने गुस्से से नारायण की बाँह पकड़ी और खींचती हुई अन्दर ले गई। फिर भी राजाराम चिल्लाता गया कि वही राजाराम है। लेकिन सब फिजूल। आज तो महाराजिन कैसे उससे खार खाए बैठी थी। उसके बाद उसने नौकर से भी अकेले में यही कहा। 'रे भोला! मैं ही तुम्हारा मालिक हूँ। मैं ही राजाराम हूँ।' राजाराम ने उससे कहा।

'इसमें क्या शक है छोटे बाबू!' भोला ने मटकी मारते हुए कहा।

'मैं तुमसे सच कहता हूँ, तुम्हें यकीन हो या न हो!' राजाराम ने कहा। भोला खिलखिलाता चला गया।

राजाराम पागल सा हो गया। कोई उसकी बातों पर विश्वास नहीं करता था। उलटे वह जो कुछ कहता लोग उसके चेहरे से कह देते थे।

रात को नारायण ने राजाराम को सलाह दी—'आप घबरा कर हरेक से यह न कहते फिरिए कि मैं ही राजाराम हूँ। कहीं लोग यह न समझ लें कि आप पागल हो गए हैं। तब लोग जबर्दस्ती घसीट कर आप को पागल-खाने में ठूँस देंगे। कुछ दिन तक चुप रह जाइए। जो होगा सो देखा जाएगा।'

महाराजिन को उस लड़के बेचारे पर तरस आया। उसे क्या मालूम था कि वही राजाराम है। उसने सोचा—'मान लिया कि नादान लड़का स्कूल से भाग ही आया है। तो क्या उसे भूखों मार देना चाहिए! ओह, क्या करूँ! उसे कचौड़ियाँ कैसे दूँ! बड़े बाबू ऊपर आसन जमा कर बैठे हुए हैं।' इतने में उसे

अचानक याद आ गया कि रसोई की कुछ चीज़ें खतम हो गई हैं। वह तुरन्त दौड़ी गई और कहने लगी—'सवेरे ही कह दिया था कि चावल खतम हो गया है। लेकिन आप अभी तक बाजार नहीं गए! जाइए, दाल-उल भी लेते आइए जिससे बार बार हैरान होना न पड़े।' ये बातें सुनते ही नारायण (जो राजाराम के रूप में था) ठठा कर हँसने लगा। लेकिन तुरन्त उसे याद आ गया कि वह राजाराम है। उसने हँसना बन्द कर दिया और चुटकी बजाते हुए कहा—'तो हुआ क्या! अभी ले आता हूँ।'

राजाराम को जो बड़े गम्भीर स्वभाव के मनुष्य थे, बच्चों की तरह हँसते-बोलते देख कर महाराजिन को बड़ा अचरज हुआ। लेकिन झट ही वह यह बात भूल गई। नारायण ने कुर्सी में से उठ कर अपनी जेब से कुंजियाँ निकालीं और अल्मारी खोली। फिर उसने बड़ी देर तक गिन कर नोटों का एक बंडल जेब में रख लिया और बाजार चल दिया।

मालिक के बाहर जाते ही महाराजिन ने नारायण को पुकारा। लेकिन उसका कहीं पता न था। पहले जब कभी पिता घर में न होते तो नारायण के शोर-गुल के मारे आस-पड़ोस वालों की नाक में दम हो जाता। लेकिन आश्चर्य! आज सारा घर सुनसान पड़ा था। 'नारायण! नारायण!' चिल्लाती महाराजिन सारे घर में ढूँढने लगी। आखिर नारायण उसे बड़े बाबू के कमरे में एक कुर्सी पर बैठा, ध्यान में डूबा हुआ दिखाई दिया। 'कितना पुकारा है तुम्हें! चुपचाप बैठे क्या सोच रहे हो यहाँ?' महाराजिन ने उससे कहा।

राजाराम ने चौंक कर सिर उठाया और उसकी ओर चक्र-दृष्टि से देख कर कहा—

'अब तू क्यों इस तरह मेरे पीछे पड़ी है! जा, अपना काम देख!'

'मैं तुमसे कहे देती हूँ; तुम्हारे ये लच्छन मुझे अच्छे नहीं लगते। रोज़-रोज़ तुम सिर चढ़े जाते हो।' यह कह कर महाराजिन ने एक तश्तरी में कचौड़ियाँ लाकर उसके सामने रख दीं। तश्तरी को देख कर राजाराम पहले तो डर गया। लेकिन फिर भूख के मारे अन्तड़ियाँ जली जा रही थीं। इधर-उधर देख कर जल्दी-जल्दी सारी कचौड़ियाँ मुँह में ठूस लीं। उसके बदन में फुर्ती आन पड़ी। पेट का दर्द गायब। उदासी का कहीं नामो-निशान नहीं। शरीर बदल जाने के कारण राजाराम अब तक दुख ही दुख भोग रहा था; लेकिन अब उसको मालूम हुआ कि इस में कुछ सुख भी है। बहुत दिनों से बदहज़मी की शिकायत थी उसे। वह गायब हो गई। वह अब जो चीज़ चाहे खा सकता है। सारा शरीर हलका जान पड़ता है। अब उसका दौड़ने और उछलने-कूदने का मन होता है। कुछ दिन तक उसे घर के जंजाल से भी छुट्टी मिल गई है। यह सब सोच कर राजाराम को बड़ी खुशी होने लगी।

उधर नारायण को भी इस परिवर्तन के कारण मन ही मन खूब खुशी होने लगी। वह बड़ी शान के साथ नोटों का बंडल जेब

में रख कर बाजार गया और सामान खरीद लाया। वहाँ दूकान पर जाकर उसने बनिए से कुछ भी मोल-तोल नहीं किया। जो दाम उसने बताया चुपचाप दे दिया और एक कुली के सिर पर सामान रख कर अकड़ते हुए घर लौटा। आते-आते एक दूकान पर रुक गया और दो तीन खिलौने खरीद लिए। राह में बहुत से लोगों ने उसे देख कर दोनों हाथ जोड़ कर प्रणाम किया। पहले तो नारायण को यह भी भान न हुआ कि लोग उसी को प्रणाम कर रहे हैं। लेकिन जब सुध आई तब फूला न समाया। वह मन ही मन खूब हँसा कि कैसा चकमा दिया है उसने! इन प्रणाम करने वालों में से कुछ लोगों को वह जानता था। लेकिन कुछ लोग ऐसे भी थे जिन्हें उसने पहले कभी नहीं देखा था। कभी कभी उसे डर भी लगा कि कहीं ये लोग उसे टोक कर बातें न करने लग जायँ। लेकिन उस के सौभाग्य से उस दिन ऐसी कोई बात न हुई। नारायण के घर लौटते-लौटते अँधेरा हो गया था। घर-घर में दिए जल गए। इतने में उसने देखा कि एक लड़का उसके घर के सामने पेड़ों की अन्धेरी छाँह में खड़ा होकर सीटी बजा रहा है। नारायण का हृदय

ज़ोरों उछल पड़ा। सीटी बजाने वाले लड़के का नाम मोहन था। वह पुराना दोस्त था। नारायण भी उसी के समान सीटी देने की कोशिश करने लगा। लेकिन बहुत कोशिश करने पर भी आज वह सीटी न दे सका। नारायण को बहुत दुख हुआ। लाचार होकर उसने पुकारा—'रे! मोहन!' मोहन ने उसकी तरफ़ देखा, लेकिन उसे नहीं देखा। साँझ की झुटपुटी में उसे मोटी तोंद, गंजा सिर, दाढ़ी-मूँछ और चश्मा ही दिखाई दिए। 'क्यों डरते हो मोहन! अरे! मैं हूँ नारायण! पहचाना नहीं?' यह कहते हुए नारायण नज़दीक आने लगा। लेकिन जब उस लड़के ने देखा कि उसे 'मोहन' कह कर पुकारने वाले नारायण के पिता हैं, तो उसके होश उड़ गए। इन्हीं ने कई बार नारायण को पीटा भी था कि 'तुम उस आवारे मोहन का साथ छोड़ दो!' इसीलिए जब कभी नारायण को बुलाना होता तो मोहन उसके घर से थोड़ी दूर पर खड़ा होकर सीटी देता था। सीटी सुनते ही नारायण मोहन को पहचान लेता और घर से भाग आता। अब मोहन ने सोचा कि आज उन दोनों का भण्डा फूट गया है। इसीलिए नारायण के बदले रामराम आ रहे हैं। वह

सर पर पाँव रख कर वहाँ से भाग खड़ा हुआ। 'बेवकूफ! भागते क्यों हो? मैं ही हूँ।' कहते हुए नारायण उसकी ओर आने लगा। लेकिन मोहन भला क्यों रुकने लगा?

'कौन? पंडित जी? आप छोटे बाबू को पुकार रहे हैं क्या?' किसी ने नारायण से पूछा। उसने तुरन्त भाग कर घर में पनाह ली।

उस रात नारायण अपने पिता के पलंग पर सोया। 'यह जिन्दगी भी बुरी नहीं है! जेब हमेशा गरम रहती है! सब लोग इज्जत करते हैं। लेकिन मुश्किल तब आती है, जब नए आदमी आकर बातें करने लगते हैं। इस के अलावा मेरे पुराने दोस्त देखते ही डर कर भागने लगते हैं। फिर भी यही जिन्दगी अच्छी है। बचपन से बढ़ कर कोई दंड नहीं। संसार बड़ों का है।' नारायण ने पड़े पड़े सोचा। उस रात उसे अच्छी तरह नींद न आई। रोज वह आठ बजते बजते सो जाता था। लेकिन आज वह बड़ी देर तक बिस्तरे पर पड़ा करवटें बदलता रहा। उधर राजाराम अपनी सारी तकलीफें भूल कर नौ बजने के पहले ही गाढ़ी नींद में डूब गया। नारायण तड़के ही उठा। बिस्तरे से उठ कर वह बेचैनी से सभी कमरों में घूमने लगा। घूमते घूमते आइने के सामने जो जा खड़ा हुआ तो गंजा सिर और दाढ़ी-मूँछें दीख पड़ीं। लेकिन यह देखने के लिए भी उसे चश्मे की जरूरत पड़ी।

धूप चढ़ आई, लेकिन उधर राजाराम नहीं जागा। इतने में स्कूल से एक लड़का नारायण को बुलाने आया। वह नारायण को अच्छी तरह जानता था। लेकिन आज उसने पहचाना नहीं। उसने कहा—'जी! आपके लड़के नारायण को मास्टर साहब ने बुला लाने को कहा है!'

राजाराम उठा। उसने रोज की तरह महाराजिन को पुकारा। पर महाराजिन सुन कर भी अनसुनी कर गई। [सशेष]

हाथियों का बँटवारा

पश्चिम की घाटियों में बहुत घने जंगल हैं। उन जंगलों में झुंड-के-झुंड हाथी घूमा करते हैं। जंगलों में रहने वाले शिकारी कई तरह से उन हाथियों को फँसाते हैं और मार पीट कर उन्हें पालतू बनाते हैं। फिर वे उन्हें राजे और रईस, जमींदार-जागीरदार या बड़े बड़े मठाधीशों के हाथ बेच देते हैं। इस तरह शिकारी खूब रुपया कमाते हैं।

हाथियों को पकड़ कर बेचने वालों में वासू नाम का एक आदमी था। वासू के कारी, तानी और चेरा नाम के तीन लड़के थे। बचपन से ही उन तीनों ने बाप के साथ हाथियों के शिकार में बड़ी प्रवीणता पाई। धीरे धीरे जब वासू बूढ़ा हो गया और चलने-फिरने के लायक नहीं रहा तब उसके तीनों लड़कों ने बाप का रोजगार अपने हाथों में ले लिया। यों उनका पैतृक व्यापार बेरोक-टोक चलता रहा।

वसू अब बहुत ही बूढ़ा हो गया था। एक दिन ऐसा भी आ गया जब उसे मालूम हुआ कि वह अब कुछ घड़ियों का ही मेहमान है।

इसलिए अन्त-काल निकट जान कर उसने अपने तीनों लड़कों को अपने बिछौने के पास बुलाया और कहा—'बच्चो! मैं अब कुछ क्षणों का ही मेहमान हूँ। मेरे पास कोई बड़ी जायदाद तो नहीं है। जो कुछ है, बस हाथी ही। इसलिए तुम तीनों मेरे कहे अनुसार हाथियों को आपस में बाँट लो। कारी! तुम आधे हाथी लो। तानी को तीसरा हिस्सा दो। चेरा को नवाँ हिस्सा दो।' यह कह कर बूढ़ा चल बसा।

ज्यादातर ऐसा होता है कि जब बँटवारा होता है तो बराबर हिस्सा लगाया जाता है। लेकिन ये लोग तो जंगली आदमी थे। उन में रिवाज था कि पिता जैसा कहे बँटवारा वैसे ही हो। कोई यह नहीं सोचता कि किसको कितना मिला। वे लोग जायदाद के लिए आपस में नहीं झगड़ते और न मन में ही कोई मैल रखते।

इसलिए चालू के लड़कों में भी जायदाद के लिए कोई झगड़ा नहीं हुआ। पिता का श्राद्ध कर्म करने के बाद तीनों बँटवारा करने बैठे। पर बाँटने में एक मुश्किल खड़ी हो गई। बात यह थी कि कुल मिला कर उनके पास सत्रह हाथी थे।

जब बड़े ने उन में से आधे ले लेना चाहा तो उसे यह न सूझा कि उनको कैसे बाँटा जाय! यही मुश्किल तानी और चेरा के हिस्से बाँटने में भी उठ खड़ी हुई। सत्रह का तीसरा हिस्सा और नवाँ हिस्सा कैसे बाँटा जाय!

उन्हों ने बहुत देर तक सोचा-विचारा। आखिर कारी ने कहा—'भाइयो! यह बेकार की उलझन क्यों! सत्रह का आधा साढ़े आठ होता है। याने आठ पूरे हाथी और एक का आधा हिस्सा। इसलिए आठ पूरे हाथी और नवें हाथी का आधा हिस्सा काट कर मुझे दे दो। क्यों, यह ठीक है न!'

'इस हिसाब से हम कितने पाएँगे!' उसके भाइयों ने, तानी और चेरा ने पूछा।

'तानी को पाँच और दो तिहाई हाथी मिलेंगे। तुम को एक हाथी और एक का टुकड़ा मिलेगा।' कारी ने चेरा से कहा।

तब तीनों भाइयों ने कहा—'चलो! बँटवारा करें।'

इस तरह उन्होंने हाथियों को कतार में खड़ा किया और पूरे हाथी बाँट लिए। बाकी हाथियों के टुकड़े करने के लिए उन्होंने अपनी कुल्हाड़ियाँ उठाईं।

ठीक उसी समय एक राजा हाथी पर चढ़ा वहाँ आ पहुँचा। वह इस जंगल में शिकार खेलने आया था। जब उसने यह तमाशा देखा तो रुक गया और हैरान होकर पूछा—'अरे, रे! यह तुम क्या करते हो? इन हाथियों को क्यों मारने जा रहे हो?' तब उन्होंने सारी कहानी कह सुनाई।

राजा ने मन में सोचा—'कैसे बेवकूफ हैं ये लोग! बाँटने के नाम पर इन तीनों हाथियों की जान लेने जा रहे हैं। समझाने-बुझाने से ये शायद ही मानें!' इसलिए उसने एक युक्ति सोची।

उस ने कहा—'तुम तीनों अपने पिता के वचन के अनुसार इन हाथियों को बाँट लेना चाहते हो। ठीक है। मुझे तुम लोगों की पितृ-भक्ति देख कर बड़ी खुशी होती है। इसलिए मैं अपना हाथी भी तुम्हें दे देता हूँ। अब इन अठारह हाथियों को आपस में बाँट लो। अब तुम्हें बँटवारा करने में कोई दिक्कत नहीं होगी।'

तीनों भाई राजा की उदारता पर बहुत खुश हुए। उन्होंने राजा के हाथी को भी अपने सत्रह हाथियों की कतार में खड़ा कर दिया।

पिता के कहे अनुसार बड़े लड़के कारी ने अपना आधा हिस्सा याने नौ हाथी ले लिए और उन्हें दूर हाँक ले गया। फिर तानी ने अठारह का तीसरा हिस्सा याने छः

हाथी ले लिए और वह भी उन्हें हाँक ले गया। फिर चेरा ने अठारह का नवाँ हिस्सा याने दो हाथी ले लिए और खुशी खुशी वहाँ से चला गया।

जाते समय तीनों फूले न समा रहे थे। क्योंकि कारी को जिसने समझा था कि उसे आठ हाथी और एक हाथी का आधा हिस्सा मिलेगा, अब नौ हाथी मिल गए थे।

तानी को जिसे पाँच हाथी और कुछ टुकड़े मिलने चाहिए थे, पूरे छः हाथी मिले।

इसी तरह चेरा को भी अपने हिस्से से ज्यादा ही, पूरे दो हाथी मिल गए थे। इसलिए तीनों भाइयों ने अपनी अपनी राह में जो कोई जान - पहचान का मिला, उसे झट बता दिया कि फलाना राजा ने हमें अपना हाथी ईनाम दिया है।

लेकिन असल में जो तमाशा हुआ उसे वे नहीं समझ पाए। बात यह थी—कारी के नौ, तानी के छः और चेरा के दो, कुल तीनों हिस्से मिल कर सत्रह ही हाथी होते हैं।

याने राजा का हाथी उसी के पास बच रहा। बँटवारे की सुविधा के लिए उसने अपने हाथी को सिर्फ उनके हाथियों की कतार में खड़ा कर दिया था।

राजा के इस कौशल से सिर्फ बँटवारा करने में सुविधा ही न हुई; बल्कि तीनों में मन - मुटाव होते होते रह गया और इस तरह उनकी मूर्खता से प्राण खोने वाले तीनों हाथियों की जान भी बच गई।

कसाई का कलेजा

किसी समय झगड़ू नाम का कसाई रहता था। वह रोज कम से कम पचास प्राणियों का वध किया करता था। उसका यह बाप-दादों का पेशा था। इसलिए उसके हृदय से दया-माया सब दूर हो गई थी और उसे उस काम में तनिक भी हिचकिचाहट नहीं होती थी। बहुत दिन बाद झगड़ू के एक लड़की पैदा हुई।

इसके बाद कुछ दिनों में उस लड़की की माँ स्वर्ग सिधार गई। झगड़ू ने उस नन्ही लड़की का नाम 'अंबा' रखा और उसे बड़े प्रेम से पालने लगा। अंबा के पैदा होने के बाद उस के निर्मम, सूखे जीवन में प्रेम की धारा बहने लगी।

धीरे धीरे अंबा कुछ बड़ी हुई। वह जैसी रूपवती थी वैसी गुणवती भी हुई। उसका हृदय तो करुणा की खान ही था। उसे देख कर लोग मन ही मन सोचते— 'आहा! झगड़ू ने पहिले जन्म में कौन से पुण्य किए थे जिसके कारण यह लड़की उसके घर पैदा हुई!'

सब से अजीब बात तो यह थी कि कसाई के घर पैदा होकर भी अंबा ने कभी माँस नहीं छुआ।

एक दिन झगड़ू अपनी दूकान पर बैठा हुआ था। एक आदमी एक सुन्दर बछड़े को बेचने के लिए उसके घर की ओर आया।

तब उस बछड़े को देखते ही अंबा ने तुरंत रुपए देकर खरीद लिया। शाम को झगड़ू घर आया तो उसने देखा कि अंबा एक सुन्दर बछड़े के साथ खेल रही है। उसे बड़ा अचरज हुआ।

लेकिन उसे अपनी लड़की से बड़ा प्रेम था। इसलिए वह कुछ नहीं बोला।

पिता को देखते ही अंबा दौड़ कर उसके पास गई और बोली—'बापू! देखो तो यह बछड़ा कितना सुन्दर है! गोद में उठा लेने की इच्छा होती है। जरा नथुने देखो तो कैसे अच्छे हैं! चमकती हुई आँखें तो देखो! बापू, देखो तो वह तुमको किस तरह देख रहा है!' इतने में बछड़ा दौड़ता आया और अंबा का हाथ चाटने लगा। अंबा उसके गले से लिपट गई और अपने हाथ से उसका सिर सहलाने लगी। अंबा की बातें सुन कर, बछड़े पर उसका इतना प्रेम देख कर झगड़ू के मन में बड़ा अचरज हुआ।

अंबा फिर दौड़ती आई और उसके पास बैठ कर बोली—'बापू! देखो तो मेरे बछड़े को! वह 'अंबा, अंबा' कह कर रंभाता है! उसे मेरा नाम किसने सिखा दिया बापू! क्या तुमने सिखा दिया है! बापू, एक बात तुमसे कहना चाहती हूँ। पर डरती हूँ कि कहीं तुम नाराज न हो जाओ।'

'तुम डरती हो अपने बापू से! बेटी पर भी कोई गुस्सा होता है!' झगड़ू ने उसे दुलारते हुए कहा।

'तो सुनो, रोज बछड़ों को मारते-मारते तुम्हारे हाथ गन्दे हो गए हैं। उन हाथों से तुम मेरे बछड़े को न छूना! बापू, क्या तुम नाराज हो गए! मेरी कसम खाकर कहो तो भला!'

अंबा ने अपना नन्हा हाथ पिता के गले में डाल दिया। ये भोली बातें सुनते ही झगड़ू के हृदय में हलचल पैदा हो गई।

उस रात को जब सारा संसार गाढ़ी नींद में डूबा हुआ था, किसी ने आकर झगड़ू का दरवाजा खटखटाया।

झगड़ू की नींद टूट गई और उसने आँखें मलते हुए किवाड़ खोले। गाँव का जमींदार देहली पर खड़ा था।

उस जमींदार का नाम सुनते ही आस-पास के गाँवों के सब लोग डर से काँप उठते थे। इतनी रात को उसे आया देख झगड़ू घबरा गया। उसके मुँह से बात तक न निकली।

'देखो, झगड़ू! मेरे घर दो मेहमान आ पहुँचे हैं। इसलिए तुम्हारे यहाँ जितना भी अच्छा माँस हो, मेरे नौकर को दे दो। यह बहुत जरूरी है। इसलिए मैं खुद आया हूँ।' जमींदार ने कहा।

यह सुनते ही झगड़ू का मुँह सूख गया। क्योंकि आज उसके पास माँस का एक टुकड़ा भी न बच रहा था। अब वह जमींदार को क्या जवाब दे! कौन मुँह दिखाए!

'हुजूर! आप तशरीफ ले जाएँ। मैं माँस अभी लिए आता हूँ।' उसने जमींदार से कहा। 'नहीं, तुम कहो तो मैं यहीं ठहर कर उसे अपने साथ ले जाऊँगा। जरा जल्दी करो!' यह कह कर जमींदार वहीं जम कर बैठ गया।

लाचार हो कर झगड़ू अँबा के बछड़े की रस्सी खोल कर घसीटते हुए उसे कसाई-खाने की ओर ले चला। बछड़ा करुण-स्वर से रँभाने लगा।

अँबा चौंक कर जाग पड़ी। उसने बाहर जाकर देखा तो बछड़े का कहीं पता न था। तुरंत सारा हाल उसकी समझ में आ गया। एक गली से हो कर वह दौड़ी और अपने पिता से पहले ही कसाई-खाने में पहुँच गई। वहाँ उसने काठ के कुंदे पर अपना सिर रख दिया और पिता की राह देखने लगी। बछड़े को घसीटता झगड़ू वहाँ आया तो वह दृश्य देख कर अवाक रह गया। उसके पाँव तले से धरती खिसक गई। उसका सर चकराने लगा और वह गश खा कर वहीं गिर पड़ा।

थोड़ी देर बाद जब उसे होश आया तो अपने काँपते हाथों से उसने अँबा को गोद में लेना चाहा।

लेकिन अँबा ओर से चिल्ला उठी—'बाबू! मुझे छूना मत! क्या इतनी जल्दी तुम अपनी बात भूल गए! लो, पहले मुझे मार डालो।' उसने कहा।

ये बातें सुनते ही झगड़ू 'हाय! अँबा! तुम्हारा कहना सच है।' कह कर फिर बेसुध होकर गिर पड़ा। वहाँ झगड़ू के आने में देर होती देख कर जमींदार साहब झुंझला उठे और मन ही मन उसे कोसते हुए कसाई-खाने की ओर चल दिए।

वहाँ आकर उन्होंने जब यह दृश्य देखा तो कुछ भी उनकी समझ में न आया। झगड़ू के होश में आने के बाद उन्हें सारी बात मालूम हो गई। इतने में बछड़ा फिर करुण-स्वर से रँभाया।

अँबा दौड़ कर उसके गले से लिपट गई। झगड़ू ने दोनों हाथ उठा कर जमींदार को सलाम किया और कहा—'हुजूर! इसी क्षण से मैंने यह पेशा छोड़ दिया। आप मुझे माफ करें।'

बछड़े के गले से लिपटी हुई अँबा को देख कर जमींदार का भी दिल पानी पानी हो गया।

'झगड़ू! तुमने अपना पेशा छोड़ दिया। लो सुनो! आज से मैं ने भी माँस खाना छोड़ दिया। इतना ही नहीं, मैं अपने मित्रों से भी कह कर यह बेरहमी आदत छुड़वा दूँगा। जाओ, तुम्हें किसी से डरने की जरूरत नहीं।' यह कह कर जमींदार खुशी-खुशी घर लौट गए।

मालव-देश के राजा भूपसिंह के एक ही बेटी थी। उस का नाम था सुरूपा। सुरूपा अपने नाम के ही अनुसार बहुत सुन्दरी थी। उससे ब्याह करने के लिए बहुत से राजकुमार लालायित थे। लेकिन राजा भूपसिंह का विचार था कि वे अपनी बेटी किसी ऐसे राजकुमार को ब्याह दें जो सुन्दरता के साथ साथ शूरता और साहस में भी अपना सानी न रखता हो। इस के लिए उसने एक अच्छा उपाय सोचा।

राजा भूपसिंह के पास एक बड़ा अनमोल मोती था। वह मोती बतख के अंडे जितना बड़ा था। राजा ने निश्चय किया कि जो उस मोती जैसा और एक मोती ला देगा, उससे राजकुमारी का ब्याह होगा। उसके आस-पास के सभी राजों में यही घोषणा सुना दी गई। तब बहुत से राजकुमार सुरूपा से ब्याह करने की कामना से उस मोती की जोड़ी लाने चले। पर अनेक वर्ष बीत जाने पर भी उनमें से कोई नहीं लौटा। आखिर नरनाथ नाम का एक राजकुमार मोती की खोज में निकला।

नरनाथ अपने राज से निकल कर दस कोस जाते जाते थक गया और सुस्ताने के लिए एक पेड़ के नीचे बैठ गया। बैठे बैठे जब उसने एक बार सर उठा कर ऊपर देखा तो पेड़ पर नीलकंठों की एक जोड़ी दिखाई दी। दोनों न जाने क्यों, आँसू ढाले जा रहे थे। यह देख नरनाथ ने उनसे पूछा—'तुम क्यों इस तरह रो रहे हो?' तब उन्होंने बताया—'एक व्याध आज सवेरे आया और हमारे बच्चे को पकड़ ले गया। इसी से हम दोनों रो रहे हैं।' यह कह कर उन दोनों

ने व्याध जिधर गया था, उधर इशारा कर दिया।

नरनाथ तुरंत उस ओर चल दिया और उस व्याध के घर जा पहुँचा। 'भाई! मुझे एक काम से एक नीलकंठ के बच्चे की जरूरत आ पड़ी है। क्या तुम्हारे पास है?' उसने उस व्याध से कहा। व्याध घर के अन्दर गया और नीलकंठ के बच्चे को लाकर उसे दे दिया। नरनाथ ने उसे एक सौ अशर्फियाँ भेंट कीं और नीलकंठ को ले जाकर उसके माँ-बाप को सौंप दिया। चिड़ियों की जोड़ी की खुशी का ठिकाना न रहा। उन्होंने कहा— 'हे राजकुमार! आज तुमने हम पर जो एहसान किया है उसे हम जन्म भर न भूलेंगे। लेकिन बताओ, इसके बदले में हम तुम्हारी क्या सेवा करें?' तब राजकुमार ने अपनी यात्रा का कारण उन्हें सुनाया और पूछा— 'क्या तुम जानते हो कि वैसा मोती मुझे कहाँ मिलेगा?'

यह सुन कर उन चिड़ियों ने कहा—'हे नरनाथ! तुम जिस मोती की खोज में चले हो उसके बारे में हम थोड़ा बहुत जानते हैं। इस में एक बहुत बड़ा रहस्य छिपा हुआ है। लेकिन तुमने आज हमारे बच्चे की जान बचाई है। इसलिए हम तुम्हें वह बात बता देंगे। अब ध्यान से सुनो—पुराने जमाने में मान-सरोवर का रहने वाला एक राज-हंस किनारे पर अंडे दिया करता था। वे अंडे ही धूप में पड़े पड़े सूख जाते और ऐसे मोती बन जाते थे। ऐसा एक मोती राक्षस-राज जरासंध के पास था। समय के हेर-फेर से जरासंध का खजाना राजा सूर्यसिंह को मिल गया और साथ ही मोती भी। इसी मोती की जोड़ी कुबेर के पास थी। कुबेर ने वह मोती

विरूपाक्ष नामक राक्षस को दिया। विरूपाक्ष आज-कल सिंहल-द्वीप पर राज्य करता है। उसने घोषणा की है कि जो कोई इस मोती का इतिहास बता देगा उसे वह मोती ही नहीं, अपना आधा राज भी देगा और ऊपर से अपनी बिटिया भी उसके साथ ब्याह देगा। सारे संसार में इस तरह के दो ही मोती हैं। क्योंकि बाद को महादेव की आज्ञा से हंसों ने किनारे पर अंडे देना बंद कर दिया। अब तुम जान गए होगे कि उस मोती की जोड़ी तुम्हें सिंहल-द्वीप में ही मिल सकती है।' उन चिड़ियों ने मोती की जन्म-कहानी कह सुनाई। तब राज-कुमार नरनाथ ने उन चिड़ियों को बहुत धन्यवाद दिया और सीधे सिंहल-द्वीप की ओर रवाना हुआ।

कई कोस जाने के बाद उसे बड़े जोर की प्यास लगी। लेकिन आस-पास कोई ऐसी जगह न थी जहाँ उसे पानी मिले। लेकिन थोड़ी दूर जाने के बाद उसे दूर पर कोई चीज़ धूप में झलमलाती, चमकती दिखाई दी। उसने सोचा कि पानी है। बस, बड़ी आशा लगा कर वह वहाँ पहुँच गया। लेकिन वह तो एक बहुत बड़ा अजगर था। नरनाथ उसे देख कर चुपचाप खड़ा रह गया।

तब कुंडली मार कर बैठे हुए उस भयङ्कर सर्प ने आदमी की बोली में कहा—'हे राजकुमार! तुम बहुत प्यासे हो। मेरे साथ आओ! मैं तुम्हें पानी पिला दूंगा।' यह कह कर वह उसे अपने साथ एक अंधेरी गुफा में ले गया। उस गुफा में कुछ दूर जाने पर एक सुन्दर महल और उस के चारों ओर एक बाग दिखाई दिया। इतने में बहुत से गन्धर्व चारों ओर से निकल आए

वे जल की झारिया लाकर राजकुमार के पैर धोकर आव-भगत करने लगे। उन्होंने ठंडी शरबत लाकर उसे पीने को दी। इतने में राजकुमार ने देखा कि उसको जो वहाँ ले आया था वह अजगर भी गन्धर्व बन गया है। कारण पूछने पर उसने कहा—'मैं इन गन्धर्वों का युवराज हूँ। मैं शाप के कारण अजगर बन गया था। एक मुनि ने मुझे बताया था कि तुम्हारी सेवा करते ही मेरा शाप छूट जाएगा। इसलिए मैं तुम्हें यहाँ बुला लाया।' यह सुन कर राजकुमार को भी बहुत खुशी हुई। उस दिन सारे गन्धर्व-नगर में खूब खुशियाँ मनाई गईं। दूसरे दिन राजकुमार ने उनसे विदा माँगी तो बड़े आग्रह के साथ उन्हों ने कहा—'कुछ दिन यहीं ठहर जाइए।' लेकिन जब राजकुमार राजी नहीं हुआ तो उन्होंने उसे एक उड़ने वाला घोड़ा दिया।

राजकुमार उस घोड़े पर सवार होकर चला। जाते-जाते उसने देखा कि एक देव-कुमार राह में एक पेड़ के नीचे बैठे बैठे रो रहा है। उसने तुरंत नजदीक जाकर पूछा कि बात क्या है? तब उस देव-कुमार ने कहा—'मैं सिंहल-देश की राजकुमारी के सौन्दर्य की प्रशंसा सुन कर उससे ब्याह करने गया। लेकिन उसके पिता ने अपने खजाने से एक बत्तख के अंडे जितना मोती मँगवाया और मुझसे उसकी जन्म-कथा पूछी। मैं उसके प्रश्न का जवाब नहीं दे सका और अपना सा मुँह लेकर लौट आया।' तब नरनाथ ने उस देव-कुमार को धीरज बँधाया और उसे अपने साथ ले लिया। दोनों उसी घोड़े पर सवार हो कर वहाँ से चले। इस तरह जाते जाते जब रात हो गई तो वे आराम

करने के लिए एक जंगल में उतर गए। उन्होंने घोड़े को एक पेड़ से बाँध दिया और भूख मिटाने के लिए फलों की खोज में निकले। इतने में कुछ राक्षसों ने पेड़ों की आड़ से निकल कर उन्हें पकड़ लिया और कहा—'अच्छा! बहुत अच्छा! बहुत दिनों के बाद हमारे राजा के लिए मनुष्य का माँस मिल रहा है। ले चलो इन्हें मालिक के पास!' उनके राजा ने उन दोनों को कैद में रखने को कहा। बस, दोनों को एक जेल में बंद कर दिया गया।

अब नरनाथ को बहुत दुख होने लगा कि उसके कारण नाहक इस देव-कुमार की भी जान जा रही है। उसने एक बूढ़े रखवाले से अपना दुखड़ा कह सुनाया। उस बूढ़े को इन दोनों की जवानी देख कर तरस आ गया और उसने जेल का ताला खोल दिया। आधी रात को जब सभी लोग सो रहे थे, उसने इन दोनों को भगा दिया। दोनों खुशी खुशी भागे और जंगल में जाकर अपने घोड़े पर सवार हो गए। अब पकड़े जाने का डर न था। सवेरा होते होते वे दोनों सिंहल-द्वीप आ पहुँचे। वहाँ एक सराय में उतरे। फिर नहा-धोकर राजसी पोशाक पहनी और राजा के पास अपने आने की खबर भेज दी। थोड़ी देर में सिपाहियों ने लौट कर कहा कि राजा उनकी राह देख रहा है। दरबार में आने पर राजा ने दोनों की बड़ी इज्जत की और ऊँचे आसनों पर बिठाया। इसके बाद नरनाथ ने कहा—'मैं उस कछुवे के अंडे जितने मोती की जन्म-कथा कहने आया हूँ।' सब लोग कहानी सुनने को उत्सुक हो उठे। तब नरनाथ ने चिड़ियों से जो कहानी सुनी थी, राजा के सामने दुहरा दी।

राजा को बहुत अचरज हुआ कि यह कैसे जान सका। वह उठा और राजकुमार को अपने सिंहासन पर बिठा कर बोला—'हे राजकुमार! अपनी प्रतिज्ञा के अनुसार मैं तुम्हें यह मोती और आधा राज दे देता हूँ। इतना ही नहीं, राजकुमारी भी अब तुम्हारी हो गई। मेरी इच्छा है कि तुम उससे ब्याह करके अब यहीं रह जाओ।'

तब राजकुमार ने कहा—'राजन्! आप की बातें सुन कर मुझे बड़ा हर्ष होता है। लेकिन मैं आप की बेटी से ब्याह नहीं कर सकता। क्योंकि मैंने अपना हृदय पहले ही किसी दूसरे को दे दिया है। आप मुझे मोती दे दीजिए और अपनी बिटिया का ब्याह इस देव-कुमार से कर दीजिए। यह बेचारा उसके लिए जान दे रहा है।'

यह सुन कर राजा ने राजकुमार को बहुत सराहा। दो-तीन दिन में उसने अपनी बेटी का ब्याह बड़ी धूम-धाम के साथ देव-कुमार से कर दिया। फिर उसने नरनाथ को वह अपूर्व मोती देकर बड़े प्रेम से विदा कर दिया। नरनाथ को बड़ी खुशी हुई कि इस तरह अनेक कष्ट उठा कर वह बत्तख के अंडे जितना बड़ा मोती पा सका। इतना ही नहीं, वह देव-कुमार की भी भलाई कर सका। वह उड़ने वाले घोड़े पर सवार होकर थोड़े ही दिन में अपने देश मालव को लौट गया। उसने वह मोती ले जाकर राजा भूपसिंह को दे दिया।

राजा को भी बड़ी खुशी हुई कि इतने दिन बाद उसकी कुमारी कन्या के योग्य वर मिला। उसने बड़े ठाट-बाट से एक शुभ-मुहूर्त में दोनों का ब्याह कर दिया। इस तरह उन अनमोल मोतियों की जोड़ी मिल गई।

अनजाना पुण्य

एक समय काशीनाथ नाम का एक धर्मात्मा आदमी था। वह इतना दानी था कि उसके मुँह से कभी 'नहीं' न निकलता था। वह देना ही जानता था, लेना नहीं। घमण्ड तो उसे छू तक न गया था और सबसे बड़ी बात तो यह थी कि उसको याद भी नहीं रहता था कि उसने कभी दूसरों की कुछ भलाई की है।

जिस तरह सूरज और चाँद बिना किसी कामना के जगत को रोशनी देते रहते हैं, जिस तरह फूल बदले में कुछ माँगे बिना, अपनी सुगन्ध संसार को देते रहते हैं, उसी तरह काशीनाथ भी शुद्ध हृदय से संसार की सेवा किया करता था।

कुछ दिन बाद स्वर्ग में भी काशीनाथ की चर्चा होने लगी। उसे देख कर देवताओं को भी अचरज होने लगा। उन्होंने सोचा—'एक अदना सा आदमी संसार भर की इतनी भलाई कैसे कर रहा है! उसे बुला कर इसका रहस्य पूछना चाहिए।' यह सोच कर देवताओं ने अपने दूतों के साथ एक विमान भेजा और काशीनाथ को स्वर्ग में बुलाया। वहाँ उसका अच्छी तरह स्वागत-सत्कार करने के बाद देवताओं ने उससे कहा—

'हे महा-पुरुष! तुमने संसार की बड़ी भलाई की और इसके बदले में कभी किसी से कुछ नहीं लिया। आज हम तुम्हें कुछ न कुछ देना चाहते हैं। तुम जो चाहते हो, हम से माँग लो!'

काशीनाथ ने कहा—'मुझे किसी चीज़ की जरूरत नहीं है।'

मेरे पास जमा होने लगेंगे तो मैं खुद भगवान को भूल जाऊँगा। भगवान की भक्ति उपदेश देने से नहीं होती। उसके लिए अपना तन-मन सब देना पड़ता है।' काशीनाथ ने उनसे कहा।

'तो क्या ऐसा वर लोगे जिससे तुमको देखते ही दुष्ट से दुष्ट भी सज्जन हो जाए! इससे तुम्हारा यश सारे संसार में फैल जाएगा।' देवताओं ने फिर कहा।

'नहीं, नहीं; ये सब देवताओं के काम हैं। मैं इतना दंभी नहीं होना चाहता।' काशीनाथ बोला।

'हमारी तो कोई बात तुम्हें पसंद न आई। तो फिर तुम्हीं कुछ माँगो!' देवताओं ने आग्रह किया।

'मैं भगवान की कृपा के सिवा और कुछ नहीं चाहता। मुझे और किसी चीज़ की ज़रूरत नहीं है।' काशीनाथ ने किसी न किसी तरह देवताओं से पिंड छुड़ाना चाहा।

'अगर तुम कुछ नहीं माँगोगे, तो हम अपने मन से तुम्हें कुछ दे देंगे।' देवताओं ने दृढ़ता से कहा।

देवताओं ने फिर पूछा—'क्या यह वरदान चाहिए कि जिस पर तुम हाथ डालो, उसकी सारी बीमारी दूर हो जाए!'

'नहीं; मुझे ऐसा वर नहीं चाहिए। एक भगवान ही मनुष्य के जीवन के स्वामी हो सकते हैं। मैं उतनी बड़ी जिम्मेदारी नहीं ले सकता।' काशीनाथ ने जवाब दिया।

'क्या हम तुमको ऐसा दिव्य रूप दें जिससे लोग देखते ही तुम्हारे भक्त बन जाएँ! फिर तुम उन्हें भगवान की भक्ति का उपदेश दे सकोगे।' उन्होंने कहा।

'नहीं, नहीं; जब अधिक-तर लोग

यह सुन कर काशीनाथ ने कहा—'देव-गण! आपके हठ से मैं एक वर माँगता हूँ। आप लोग मुझे ऐसी शक्ति दीजिए जिससे मैं अनजान में ही संसार की भलाई करता रहूँ।'

यह सुनते ही देवता लोग घबरा गए। बहुत सोच-विचार कर उन्होंने काशीनाथ को एक विचित्र वर दिया। आदमी जब चलता है तो उसकी छाँह जमीन पर पड़ती है न! हाँ, तो देवताओं ने काशीनाथ को ऐसा वर दिया जिससे उसकी छाँह में अद्भुत प्रभाव पैदा हो गया। उसकी छाँह छूते ही लोगों की भयङ्कर से भयङ्कर बीमारी दूर हो जाती थी। उसकी छाँह में चलने वाले सब तरह की चिंताओं से मुक्त हो जाते और तन्मय हो आनन्द से भर जाते थे।

काशीनाथ जब चलने लगता तो जितनी दूर उसकी छाँह पड़ती उतनी दूर तक ऊसर जमीन भी उपजाऊ हो जाती और ठूँठ भी फलने-फूलने लगते। उसके पैर रखते ही मरु-स्थल में भी निर्मल जल के सोते कल-कल नाद करते हुए फूट निकलते। जब लोगों को यह बात मालूम हो गई तो वे काशीनाथ का पीछा करने लगे। वह जहाँ जाता वहीं दीन-दुखियों की भीड़ लग जाती। माताएँ अपने रोगी बच्चों को उसकी छाँह में ले जातीं और नीरोग हँस-मुख बच्चों को गोद में उठा कर लौटतीं। लेकिन काशीनाथ अपनी छाया का प्रभाव स्वयं नहीं जानता था। उसे नहीं मालूम था कि वह अनजाने कितने लोगों की भलाई कर रहा है। यह सब देवताओं के वर-दान का प्रभाव था। इस तरह काशीनाथ से उपदेश पाए बिना ही लोग उसके भक्त बन गए और अपना चाल-चलन सुधारने लगे।

एक समय एक गाँव में गुणीराम नाम का एक बनिया रहता था। उसे अपनी स्त्री और बच्चों के साथ काशी जी की यात्रा कर आने की इच्छा हुई। उस समय उसके पास दो सौ अशर्फियाँ थीं। उसने सोचा कि पैसा पास रहने पर खर्च हो जाता है। इसलिए सौ अशर्फियाँ पास रख कर बाकी सौ कहीं छिपा देनी चाहिए। यह सोच कर उसने अपने मित्र लाला धनीराम के पास जाकर सलाह माँगी कि अशर्फियाँ कहाँ छिपाई जाएँ।

तब धनीराम ने कहा—'गाँव के बाहर मुतहा बरगद का पेड़ है। अशर्फियों को उसके नीचे गाड़ दो। वही सबसे अच्छी जगह है। क्योंकि भूतों के डर से कोई वहाँ नहीं जाता।'

जब रात हो गई और सब लोग सो गए तो गुणीराम अशर्फियाँ छिपाने के लिए मुतहा बरगद की ओर चला। उसने सोचा कि अँधेरे में अकेले जाना ठीक नहीं। इसलिए धनीराम को भी साथ ले लिया। बरगद के नीचे एक गज गहरा खोद कर, अशर्फियों को गाड़ दिया और दोनों अपने अपने घर लौट गए।

दूसरे दिन गुणीराम सपरिवार तीर्थ-यात्रा करने निकल पड़ा। गाँव के बाहर जाते ही वह अशर्फियों की बात भूल गया!

लेकिन जब उसका मित्र धनीराम पिछली रात घर लौटा तो उसकी पत्नी ने पूछा था—'अजी! इतनी रात को तुम कहाँ गए थे!'

धनीराम ने सच्ची बात बता दी। अशर्फियों की बात सुनते ही धनीराम की पत्नी की नीयत बिगड़ गई। वह अपने पति को तंग करने लगी कि 'जाओ! वे अशर्फियाँ खोद कर ले आओ!'

कृष्णचन्द्र

धनीराम पहले तो पत्नी पर बिगड़ने लगा—'चुड़ैल कहीं की! क्या तू चाहती है कि मैं अपने मित्र के साथ विश्वास-घात करूं!'

लेकिन उसकी स्त्री ने धमकाया कि अगर वह वहाँ से अशर्फियाँ नहीं लाया तो वह कुएं या तालाब में डूब जाएगी। इस पर उससे रहा न गया। उसने घबरा कर चुप्पी साध ली। उसी वक्त उसने बरगद के पास जाकर अशर्फियाँ निकाल लीं और लाकर अपनी पत्नी को दे दीं। उन अशर्फियों से ललाइन ने गहने बनवा लिए और उन्हें पहन कर सारे गाँव में घूम घूम कर दिखाने लगी। नतीजा यह हुआ कि गाँव की सभी औरतें उससे जलने लगीं।

गुणीराम को सपरिवार काशी जाकर लौट आने में बहुत दिन लग गए। जब तक उसने अपने गाँव में पैर रखे तो उसके पास का पैसा सब चुक गया था। इसलिए वह उसी रात बरगद के नीचे गया और खोद कर देखा। लेकिन वहाँ क्या था! कुछ भी नहीं!

उसने सोचा—'धनीराम ने मुझे कैसा धोखा दिया! पीठ फेरते ही उसने मेरी अशर्फियाँ चुरा लीं!' माथा ठोंक कर वह घर लौट गया और पत्नी से जाकर सारी कहानी कह सुनाई। उसकी पत्नी बहुत समझदार थी। उसने पति को ढाढ़स बँधा कर कहा—'अब सोच करने से कोई फायदा नहीं! आप जाकर धनीराम से पूछिएगा तो वह साफ़ इनकार कर जाएगा। आप किसी से शिकायत भी नहीं कर सकते। क्योंकि सबूत तो कुछ है नहीं! फिर भी मुझे एक सुन्दर उपाय सूझा है। अगर आप चाहें तो वैसा करके देखिए!' यह कह कर उसने पति के कान में एक बात कह दी।

दूसरे दिन गुणीराम सवेरे उठ कर धनीराम के घर गया। उस का मुँह खिला हुआ

था। उसे देख कर कोई नहीं सोच सकता था कि उसकी कोई चीज़ खो गई है। धनीराम ने अपने मित्र को देख कर सोचा—'अशर्फियों की बात अभी इसे मालूम नहीं हुई।'

गुणीराम ने बात-चीत शुरू कर दी—'न जाने, मैं कैसी अच्छी साइत में यात्रा करने चला था! सब लोग यात्रा में रुपया खर्च कर आते हैं। लेकिन मैं काशी जी में व्यापार कर के रुपए कमा लाया। आज सौ अशर्फियों की जगह मेरे पास एक हजार हैं।'

तुरंत धनीराम और उसकी पत्नी गुणीराम के सौभाग्य पर जलने लगे। लेकिन बाहर से उन्होंने कहा—'तुम्हारी नसीब अच्छी है।'

तब गुणीराम ने फिर कहा—'मेरी पत्नी कहती है—चलो, रामेश्वर की भी यात्रा कर आएँ। काशी के विश्वनाथ ने हजार अशर्फियाँ दे ही दी हैं। देखें, अब रामेश्वरजी कितना देते हैं! मुझे भी उसकी बात जँच गई है। तीन-चार दिनों में हम फिर रामेश्वर चल देंगे।'

'जरूर जाना! रामेश्वर तो सबसे बड़ा तीर्थ है।' धनीराम ने कहा।

तुरंत गुणीराम ने धीमे स्वर में कहा—'भई, रामेश्वर जाने के पहले हमें एक बार बरगद के पास जाना होगा। क्योंकि मेरी इच्छा है कि काशी से जो हजार अशर्फियाँ लाया हूँ, वे भी वहीं छिपा दूँ!' बरगद की बात सुनते ही धनीराम का मुँह सफेद पड़ गया। पर गुणीराम ने यह देख कर भी कुछ नहीं कहा और चुपचाप घर लौट गया।

गुणीराम के जाने के बाद धनीराम के मन में खलबली मच गई। बरगद के नीचे खोदने के बाद गुणीराम पूछेगा कि अशर्फियाँ कहाँ गईं! तब वह क्या जवाब देगा! वह मन ही मन बहुत पछताने लगा। लेकिन उसकी स्त्री को कुछ भी पछतावा न था। उल्टे उसका सारा ध्यान तो उन हजार अशर्फियों पर लगा हुआ था जो गुणीराम काशी से

कमा लाया था। वह सोचने लगी कि उन हजार अशर्फियों से वह और कौन कौन गहने बनवा सकती है! सोने की हँसुली! तीन लड़ वाला हार! सोने के ठोस कड़े! वह सोचने लगी कि ये सब पहन कर जब वह गाँव की औरतों के पास जाएगी तो वे कितना कुढ़ेंगी! अब वह बार-बार पति से पूछने लगी—'अजी! गुणीराम ने आपको कब बरगद के पास आने को कहा है?'

'क्यों, अब क्या सूझा है तुझे! मैं तो बरगद के पास नहीं जाने का। जब वह पूछेगा कि अशर्फियाँ कहाँ गईं तो मैं क्या जवाब दूँगा!' धनीराम ने कहा।

'बस, इतने ही में आपकी अक्ल घास चरने चली गई! तो सुन लीजिए! आप रातों-रात जाकर सौ अशर्फियाँ बरगद के नीचे उसी जगह गाड़ आइए। सवेरे बेधड़क गुणीराम के साथ वहाँ जाइए और हजार अशर्फियाँ भी वहीं गड़वा आइए। अपनी सौ अशर्फियाँ सुरक्षित देख कर गुणीराम को कोई शक न होगा। वह निश्चिन्त मन से हजार अशर्फियाँ भी वहीं गाड़ देगा और रामेश्वर चला जायगा। तब हम जाएँगे और ग्यारह सौ अशर्फियाँ खोद कर ले आएँगे।' धनीराम की स्त्री यह कह कर खिलखिला उठी।

'ठीक है! पर अभी सौ अशर्फियाँ लाएँ कहाँ से!' धनीराम ने पूछा।

'और कहाँ से लाएँगे! जाइए—कर्ज ले आइए! मेरे अपने गहने, गुणीराम की अशर्फियों से बनाए हुए गहने, सब ले जाइए और किसी के पास गिरवी रख कर सौ अशर्फियाँ ले आइए! ज्यों ही गुणीराम रामेश्वर की यात्रा करेगा, ग्यारह सौ अशर्फियाँ हमारे हाथ आ जाएँगी और हम गिरवी से गहने छुड़ा लेंगी।' धनीराम की स्त्री ने कहा।

धनीराम की खुशी का ठिकाना न रहा। उसने जरा भी देर न लगाई। झटपट उठा

कर घर के सब गहने पोटली में बाँध कर एक महाजन के पास गया और गिरवी रख कर सौ अशर्फियाँ ले आया। फिर वह रातों-रात अशर्फियाँ बरगद के नीचे उसी जगह गाड़ आया। सवेरा होते ही वह गुणीराम के घर गया और बोला—'भाई! चल कर अपनी धरोहर देख लो।'

'अच्छा, तुम तैयार रहना; मैं आज रात ठीक ग्यारह बजे तुम्हारे घर आऊँगा।' गुणीराम ने मामूली ढंग से कहा।

उस रात को धनीराम बड़ी बेचैनी के साथ गुणीराम की राह देख रहा था। ग्यारह बज गए; आखिर बारह भी बज गए। लेकिन गुणीराम का कहीं पता नहीं। तब धनीराम घबरा गया और अपने मित्र के घर जाकर उसे जगाया। 'बात क्या है? तुम आए नहीं क्यों?' उसने पूछा।

'अरे! मैं तो भूल ही गया था! माफ़ करना भाई! तुम सोए नहीं अभी तक? मैंने सोचा कि सबेरे आकर तुम्हें बता दूँगा बात यह है कि हमने रामेश्वर जाने का विचार छोड़ दिया। शाम को मैं वैसे ही टहलते टहलते बरगद की तरफ़ चला गया था। बरगद को देखते ही अशर्फियों की बात याद आ गई। मैंने सोचा—जब यहाँ तक आ ही गया हूँ तो अशर्फियाँ क्यों न लेता जाऊँ! बस, अशर्फियाँ निकाल कर घर लेता आया। अशर्फियाँ ज्यों-की-त्यों पड़ी थीं। हाँ, रात ज़्यादा हो गई। अब तुम भी जाकर सो जाओ न!' यह कह कर गुणीराम निश्चिन्त सो गया। बेचारा धनीराम तो मन-ही-मन कट गया। कलेजे पर छुरियाँ चल गईं। उसकी स्त्री ने जब यह सुना तो सिर पीट कर रोने-धोने लग गई। पराए धन पर हाथ बढ़ाने से अपना भी गँवा बैठे! किसी से कुछ शिकायत भी नहीं कर सकते थे! बस, मन मसोस कर चुप हो रहे! ठीक ही कहा है—'जैसी करनी, वैसी भरनी।'

सुनो—सूरज और चाँद भाई-भाई हैं। लेकिन सूरज आग की तरह जलता है और चाँद अमृत जैसा ठंडा है। अचरज होगा सुन कर—सूरज की पत्नी छाया जितनी ठंडी है, चाँद की पत्नी रोहिणी उतनी ही गरम। दोनों भाई भगवान की दो आँखें हैं और दिन-रात तीनों लोकों के पाप-पुण्य देखा करते हैं। दिन में सूरज की ड्यूटी है और रात को चाँद आ जाता है। इस तरह दोनों भाई अपना काम दो हिस्सों में बाँट लेते है और दोनों बारह-बारह घण्टों तक चल कर अपने हिस्से का काम पूरा करते हैं। सूरज के पास सात घोड़ों वाला रथ है। उस पर बैठ कर वह बड़े आराम से ठीक समय पर आ जाता है। लेकिन चाँद को पैदल चलना पड़ता है। इस कारण हमेशा लेट हो जाता है। कभी-कभी तो रास्ते में ही सवेरा हो जाता है। महीने में शायद एकाध दिन ही वह समय पर मँज़िल तक पहुँच पाता है। अपने लेट-लतीफ दुलारे देवर का यह हाल देख कर छाया देवी उसकी खूब हँसी उड़ाती है। यह सब देख कर रोहिणी का पारा और भी चढ़ जाता है।

हाँ, तो एक दिन रोहिणी सरस्वती देवी की शरण में गई और प्रार्थना करके उनसे यह वर माँगा—'माँ! मेरे पति-देव को ऐसी सवारी दीजिए जो एक दम नई हो, सबसे सुन्दर हो और सबसे तेज हो!'

'एवमस्तु' कह कर सरस्वती देवी अन्तर्धान हो गईं।

देवी सरस्वती घर आकर झट विरंचि-बाबा के दफ्तर में गईं। वहाँ जाकर उन्होंने देखा कि चारों ओर आधी गढ़ी, या बिगड़ी हुई चीज़ें पड़ी हुई हैं। उनमें एक चीज़ पर उन का मन गड़ गया। उसका रंग सुनहला था। उस पर सुन्दर मणियों के से धब्बे थे। मुँह भी बहुत मनोहर था। आँखें लजीली और

बड़ी-बड़ी थीं। टाँगें पतली-पतली, देखने में बड़ी भली लगती थीं। देवी सरस्वती ने उस चीज़ में जान डाल दी और उसे ले जाकर रोहिणी को दे दिया।

रोहिणी ने उसे अनेक तरह से सजा कर अपने पति की भेंट कर दी। चाँद ने उसका नाम 'मृग' रखा और उसे अपनी सवारी बना ली। इस सवारी की कृपा से अब चाँद का सफ़र बहुत आसानी से कटने लगा। संसार को भी यह देख कर बहुत आनन्द होने लगा। लेकिन छाया देवी की आँखें डाह से जलने लगीं। क्योंकि यह विचित्र मृग उस के पति के सात घोड़ों से भी तेज दौड़ता था। यह उसकी बर्दाश्त के बाहर था। अब वह अपने पति को हरदम तंग करने लगी—'जाओ! तुम भी वैसी एक सवारी कहीं से ले आओ।'

आखिर सूरज ने भी ब्रह्मा के पास जाकर कहा—'आप मुझे भी ऐसी ही सवारी दीजिए जैसी कि आपने चाँद को दी।'

पहले तो यह बात सुनते ही ब्रह्मा जी हक्के-बक्के से रह गए। क्योंकि उन्होंने चाँद को कभी कोई सवारी नहीं दी थी। लेकिन पीछे उन्होंने अपनी दिव्य-दृष्टि से सारा हाल जान लिया और गुस्से में आकर सरस्वती को शाप दे दिया कि 'जाओ, आज से जो तुम्हारा आश्रय लेगा, वह आजीवन दरिद्र बना रहेगा।' फिर ब्रह्मा ने ठीक मृग की तरह का एक जीव बनाया और उसे सुन्दर सींगों से सजा दिया। उन्होंने सोचा कि उस के बदन पर धब्बे अच्छे नहीं लगते। इसलिए उन्होंने उनको पोंछ डाला। उन्होंने इस नए जीव को और भी तेज बनाया। इसी कारण से हरिण के सींग नहीं हैं और बारह-सिंगे के हैं। हरिण देवी सरस्वती ने बनाया था और बारह-सिंगा ब्रह्मा ने।
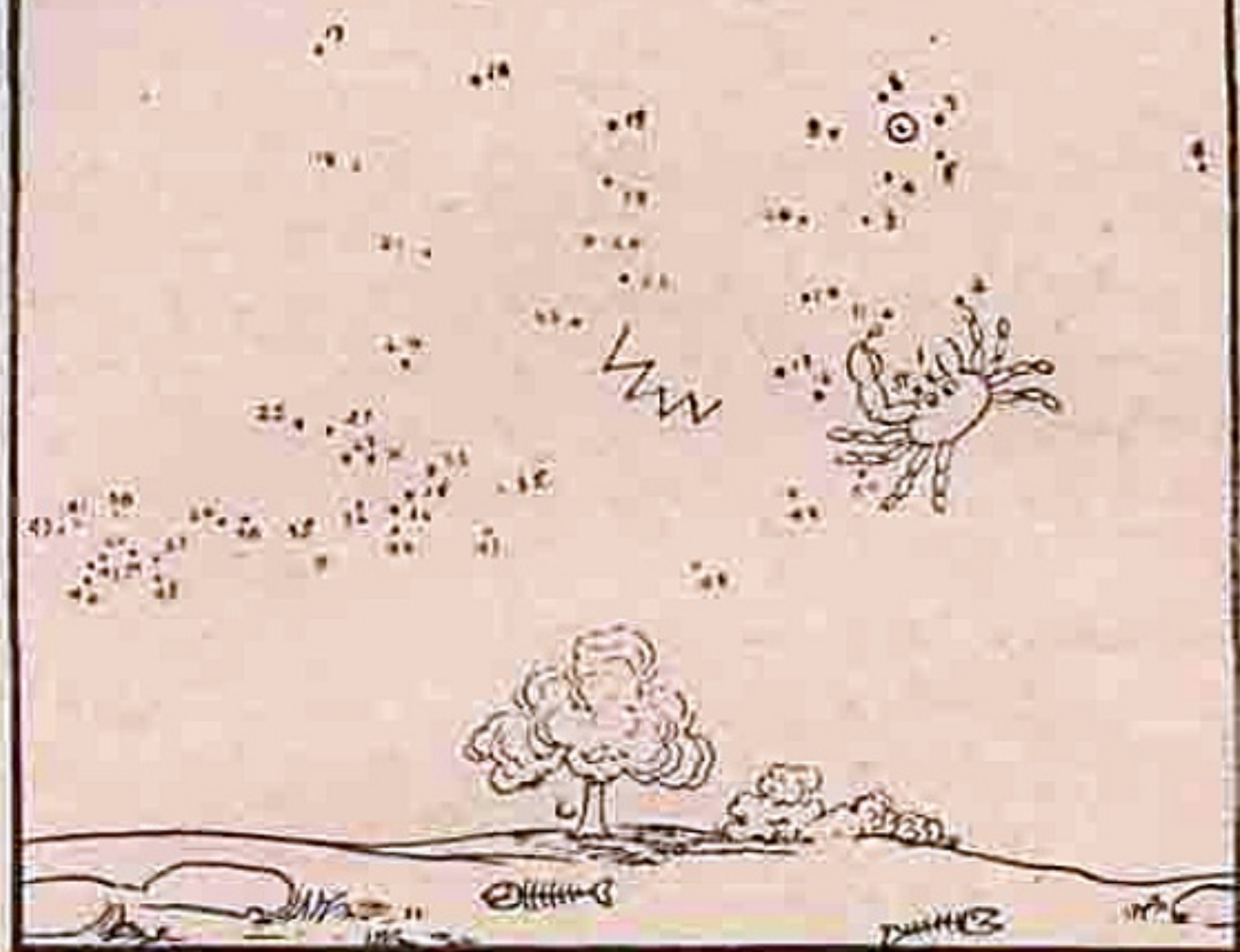
१ से लेकर ५१ -वें नुकते तक लकीर खींच कर मिलाने से चोर पकड़ा जाएगा।

बताओ तो ?

बगल में दस शब्द हैं जिनके पहले अक्षर गायब हैं। उनको पूरा करने से यहाँ दिए हुए अर्थ वाले शब्द निकल आएंगे। क्या तुम उन्हें पूरा कर सकते हो ! अगर न पूरा कर सको तो उत्तर के लिए ५१-वाँ पृष्ठ देखो !

१. —रक = तारा . . . . .

२. —रक = करने वाला . . .

३. —रक = हीरा . . . . .

४. —रक = पूरा करने वाला .

५. —रक = प्रेरणा देने वाला

६. —रक = कली . . . . .

७. —रक = भौंरा . . . . .

८. —रक = आयुर्वेद के जन्मदाता

९. —रक = स्वर्ग का व्यतिरिक्त

१०. —रक = भेद . . . . .

ऊपर के नौ चित्रों में सब एक से दिखाई देते हैं। लेकिन वास्तव में दो ही एक से हैं। बताओ तो देखें, वे दोनों कौन से हैं ! अगर न बता सको तो जवाब के लिए ५५-वाँ पृष्ठ देखो !

चन्दामामा पहेली

संकेत

बायें से दायें :

१. एक फूल
६. झगड़ा
८. साँप
१०. विष्णु
११. पत्थर
१२. बेल
१३. नाविक
१५. बालापन

ऊपर से नीचे :

२. सूरज
३. हमारे नेता
४. हर्ष
५. उचित
७. दुख
९. कंठ
१०. बलराम का हथियार
१३. पंछी
१४. घोंघा

'बताओ तो!' का जवाब :

१. तारक, २. कारक, ३. हीरक,
४. पूरक, ५. प्रेरक, ६. कोरक,
७. नीरक, ८. नारक, ९. नरक, १०. फरक।

खुराक—माँ का दूध

खुराक बहुत तरह की होती है। लेकिन दूध सबसे अच्छी खुराक है। दूध में सबसे अच्छा माँ का दूध है। बच्चों के लिए माँ के दूध से बढ़ कर कुछ नहीं है। इसलिए बच्चों को जहाँ तक हो सके, माँ का ही दूध देना चाहिए।

सुनो—मैं माँ के दूध के बारे में एक कहानी सुनाती हूँ। हनुमान जी ने पैदा होते ही सूरज को देख कर कोई लाल लाल फल समझ लिया और उसे पकड़ने के लिए हाथ पसारा। जब सूरज को बचाने का कोई चारा न रहा तो इन्द्र ने हनुमान पर अपनी गदा फैंकी। वार हनुमान जी के मुँह पर लगा और वे मूर्छित हो गए। तब उनकी माँ अंजना देवी उन्हें अपनी गोद में लेकर दूध पिलाने लगीं। दूध की एक दो बूँद जमीन पर भी गिरीं। उन बूंदों का प्रभाव ऐसा था कि वे धरती को चीर कर पाताल तक बहती चली गईं।

इस छोटी सी कहानी से माँ के दूध का प्रभव पूरी तरह जाना जा सकता है। डाक्टर-वैद्य लोग भी माँ के दूध को ही सबसे अच्छा ठहराते हैं।

लेकिन कुछ माताएँ बच्चों को अपना दूध नहीं पिलतीं। यह अच्छी बात नहीं है। साधारणतया ऐसे बच्चों का स्वास्थ्य बहुत जल्दी बिगड़ जाता है। इसलिए स्वस्थ माताओं को चाहिए कि वे जहाँ तक हो सके, बच्चों को अपना ही दूध पिलाएँ।

तुम्हारी दीदी

कमला

सुन्दरी बाई
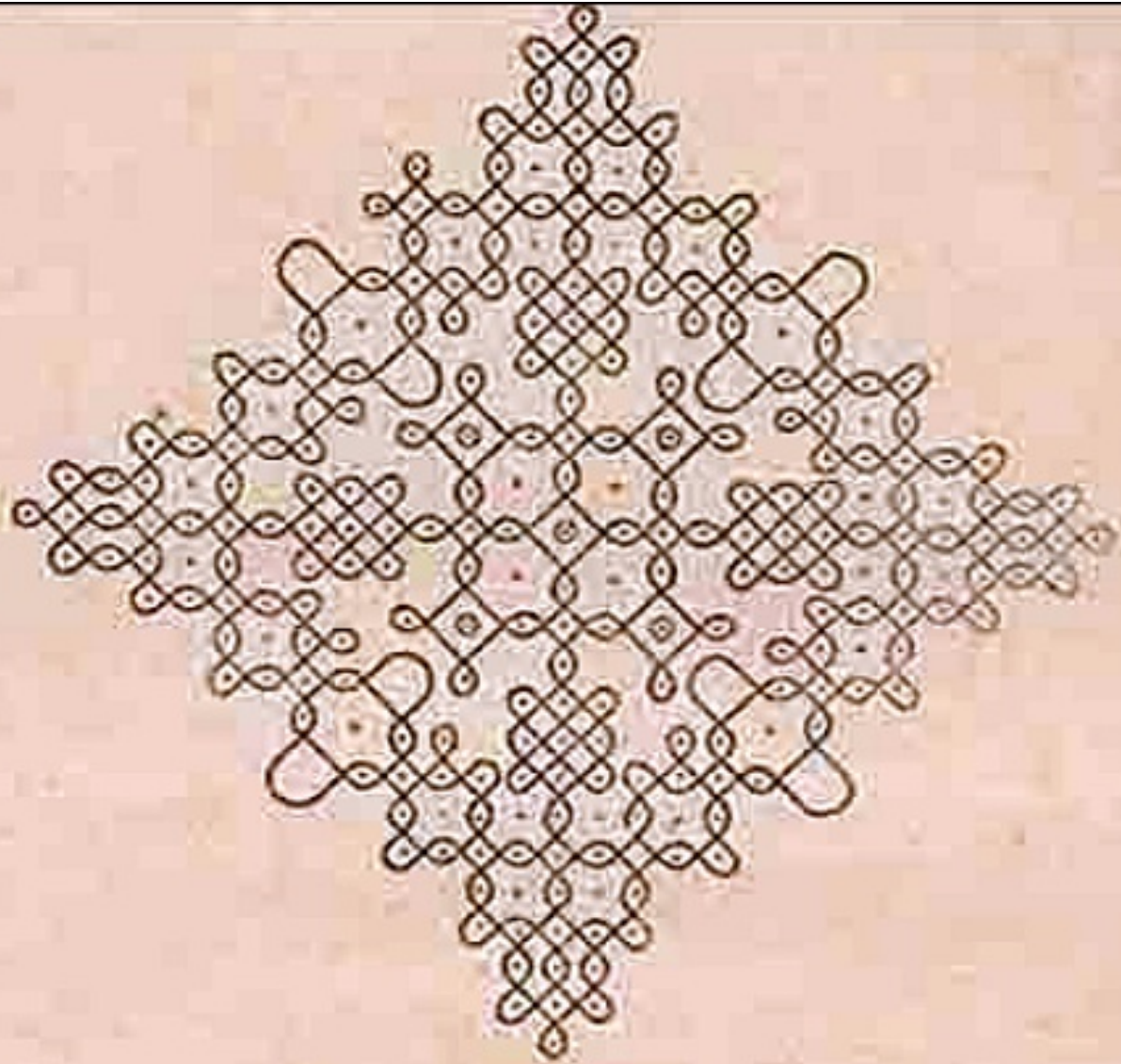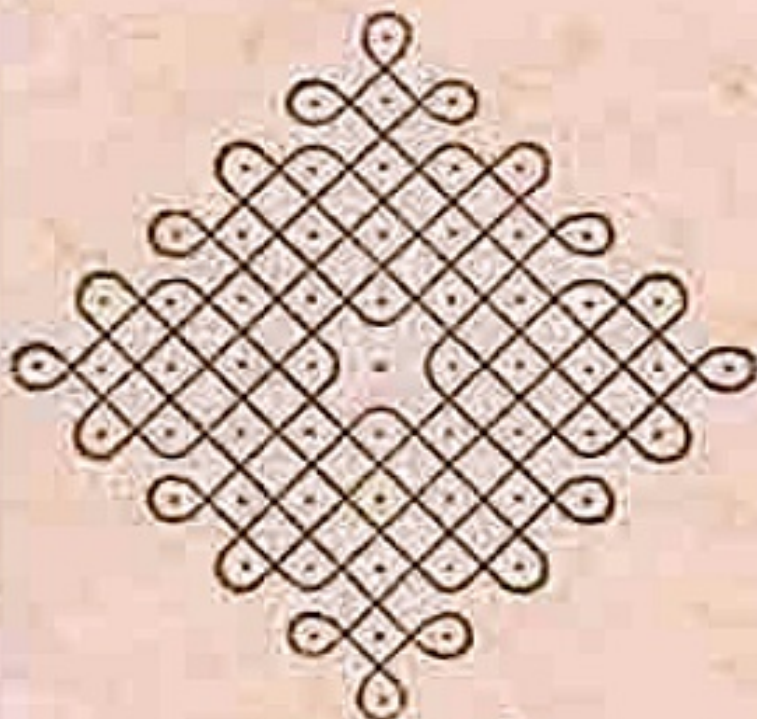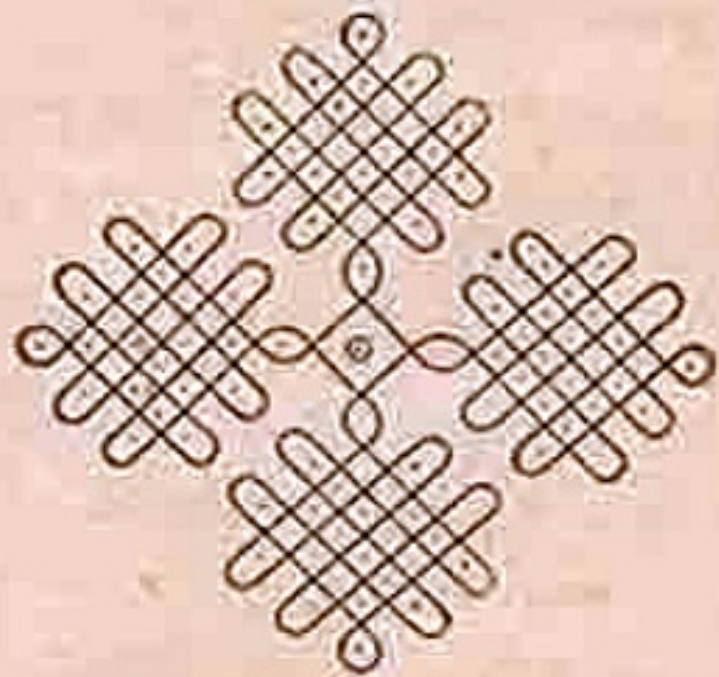
ममोला

टूटी हुई दियासलाई की सींक को पहले जैसी बना देना

बाजीगर अपने साथ लाई हुई रूमाल की तह में एक सींक रखता है जिसे एक दर्शक तोड़ देता है। लेकिन जब बाजीगर फिर रूमाल को फटकार देता है तो सींक ज्यों की त्यों गिर पड़ती है। क्या तुम सोच सकते हो कि यह कैसे सम्भव है?

यह तमाशा करने के लिए एक रूमाल को पहले से तैयार करके लाना चाहिए। इस रूमाल के किनारे मोड़ कर सी दिए जाएंगे। इस मोड़ में तुम पहले ही एक सींक घुसा कर छिपा रखोगे। इस तरह रूमाल को पहले से तैयार करके तुम तमाशा करने आओगे। दर्शकों के सामने खड़े होकर रूमाल को सामने मेज पर बिछा दो या अपने हाथ में पकड़े रखो। फिर दर्शकों से कहो कि उनमें से कोई अपनी दियासलाई से एक सींक निकाल कर रूमाल में रखे। जब कोई उस तरह रखेगा तो तुम रूमाल को मोड़ लोगे। लेकिन इस तरह तह लगाते वक्त तुम अपनी चालाकी से ऐसा करोगे जिससे पहले से तुम्हारे द्वारा रूमाल में रख कर लाई हुई सींक ऊपर की तह में हो और दर्शक की सींक नीचे चली जाए। तब दर्शक को बुलाओ और अपनी दियासलाई की सींक उसके हाथ में पकड़ा कर तोड़ने को कहो। वह उसे तोड़ेगा। उसके टूटने की आवाज भी वह

सुनेगा। उसके बाद तुम झूठ-मूठ का कोई मंतर पढ़ कर अपना रूमाल इधर उधर फिरा कर फैला दो। दर्शक खुद अपने हाथ से तोड़ी हुई सींक ज्यों की त्यों देख कर दंग रह जाएगा।

तुम दर्शकों का शक मिटाने के लिए उनसे यह भी कह सकते हो कि वे अपनी सींक पर कोई निशान बना लें। जब अन्त में वे अपनी ही सींक जिसको उन्होंने समझा था कि टूट गई, ज्यों की त्यों देखेंगे तो उनको और भी विश्वास हो जाएगा।

चित्रों को देखो—पहले चित्र में दिखाया गया है कि रूमाल के किनारे किस तरह मोड़ कर सिए जाएँ और अपनी सींक कहाँ छिपा रखी जाए। बगल में दिखाया गया है कि दर्शक की सींक रूमाल में रखने के बाद कैसे तह लगानी चाहिए। उसके नीचे दर्शक की सींक ज्यों की त्यों दिखाई गई है।

[जो इस सम्बन्ध में प्रोफेसर साहब से पत्र-व्यवहार करना चाहें वे उनको 'चन्दामामा' का उल्लेख करते हुए अंग्रेजी में लिखें।

प्रोफेसर पी. सी सरकार, मेजीशियन
१२/३ ए, अमीर लेन, बाल गंज कलकत्ता, १९]

पाठक-गण ध्यान दें!

इस बीच में प्रोफेसर साहब विदेशों से घूम कर लौट आए और बंबई में तमाशा करने गए। जब उधर सारा बंबई में उनका नाम गूंज रहा था तो इधर कुछ चोरों ने कलकत्ते में उनका पोस्ट-बाक्स तोड़ कर चिट्ठी-पत्री सभी चुरा ले गए। अगर किन्हीं पाठकों को उनके पत्रों का उत्तर नहीं मिला है तो समझ लें कि यही कारण है। प्रोफेसर साहब ने अब पता बदल लिया है। पाठक-गण कृपया नए पते से ही पत्र-व्यवहार करें।

चन्दामामा पहेली का जवाब :

नौ चित्रों वाली पहेली का जवाब :

२ और ४ नंबर वाले चित्र एक से हैं।

इस चित्र को रंग कर अपने पास रख लेना और अगले महीने के चन्दामामा के पिछले कवर पर के चित्र से इसका मिलान करके देख लेना।

Photo by B. Ranganadham

शिकारी

बुलबुलों के शौकीन